साधु और असाधु

पांडेय बेचन शर्मा

साधु और असाधु

(उग्रजी हिंदी के श्रेष्ठ नाटककार , औपन्यासिक , कहानी-लेखक और कवि हैं। आपका गद्य हिंदी में विशेष स्थान रखता है। उसमें उमंग , सरलता और स्वाभाविकता का अपूर्व सामंजस्य है। शब्द-चित्र बहुत मनोहर होते हैं। भाषा में उर्दू-शब्दों और मुहावरों का प्रयोग बहुत सुंदर होता है। संस्कृत शब्दों की मधुर पदावली एक बार सुनने पर कानों में गूँजा करती है। यथासंभव आप कोई भी बात इस

सुसंस्कृत ढंग से कहते हैं कि शीघ्र ही समझ में आ जाए। भाषा-प्रवाह देखते ही बनता है। लेखन-शैली प्रभावोत्पादक होती है। इस कहानी में साधुता और असाधुता का विश्लेषण किया गया है , जो प्रत्येक पाठक के लिए विचार करने का विषय है। - सुधा-संपादक*)*

साधु गंगादास और असाधु गूदड़ ग्वाले में कोई चाहे, तो कह सकता है कि खासा दोस्ताना था। साधु लक्ष्मीपुर कस्बे के बाहर रहता था एक छोटी-सी, कोई आध बीघे की, आमों की बगिया में, और असाधु गूदड़ ग्वाला रहता था कस्बे के अंदर मक्खनपुर नामक अहीरों के मुहल्ले में। गंगादास और गूदड़ यद्यपि हमारी कहानी के समय क्रमश: **40** और **35** वर्ष के थे, मगर थे वे एक-दूसरे के बचपने के लँगोटिया यार।

साधु और बदमाश की बचपन की दोस्ती यों संभव हो सकी कि गंगादास के गुरु श्रीगोविंददासजी छोटे मगर मठकारी साधु थे। अपने तप और प्रभाव ही से उन्होंने उस आधे बीघे की रसाल-बगिया को लक्ष्मीपुर के एक जमींदार द्वारा प्राप्त किया था। दूसरे जमींदार ने गोविंददासजी के आदेशानुसार उसमें राम-मंदिर बनवा दिया। सारे कस्बे के चंदे से बगिया में पक्की, जगत का एक कुआँ भी तैयार कराया गया। और, जब तक गोविंददासजी हृष्ट-पुष्ट थे, उसी बगिया में परम संतुष्ट रहते थे। लेकिन जब उन्होंने स्वयं पर दुर्बलताओं का दबाव पड़ते पाया, तब किसी ऐसे व्यक्ति के लिए चिंतित हो उठे, जो उनके बाद भाव और भक्ति से भगवान की पूजा और सेवा करता रहे। लक्ष्मीपुर के भक्तों ने सलाह दी कि वह किसी कुलीन को अपना शिष्य बना लें। यही उन्होंने मन-ही-मन निश्चय भी किया, लेकिन बीच में गंगादास टपक पड़े, जिन्हें विधवा माता जन्म लेते ही लेकर नदी में बहाने जा रही थीं। गंगादास को उसकी माता से माँग लाकर गोविंददास ने गंगादास बनाया, पाला-पोसा, बड़ा किया, लिखाया और पढ़ाया भी। गुरु गोविंददास ने अपने शिष्ट के चरित्र पर भी भरपूर ध्यान रखा था - संयम, यम, नियम, व्रत, उपवास और कठोर ब्रह्मचर्य में बाँध-बाँधकर गुरु ने आखिरकार चेले को साधु बना ही डाला। गोविंददासजी जब बैकुंठवासी हुए, उस वक्त उनके शिष्य गंगादास जी पच्चीस वर्ष के पूरे पचहत्थे जवान थे। कस्बे के सैंकड़ों पंडित-विद्वानों से जान-पहचान होने पर भी गंगादास का सबसे बड़ा मित्र था - ग्वाला गूदड़ - बाल-मित्र। क्योंकि गूदड़ का बाप मंदिर की गाय दुहने जब आता, तब उसको, अक्सर, संग लाता था। गोशाला साफ करने, गायों को नहलाने, पानी भरने में गूदड़ के बाप को कई घंटे लगते, और अक्सर कई घंटे गूदड़ और गंगादास साथ-ही-साथ बिताते। खेलते, हँसते, दोनों यह भूलकर कि एक साधु का चेला है और दूसरा साधारण बालक। यों ही दिन बीते, हफ्ते, महीने और बरसों बीते। गंगादास बच्चे से बड़े हुए,

और फिर हुए साधु से महंत, मगर गूदड़ ग्वाला और साधु गंगादास का प्रेम दिन दूना और रात चौगुना ही बढ़ता रहा, यद्यपि पिछले काँटे गूदड़ लक्ष्मीपुर में बुरी तरह बदनाम हो गया था। लोगों का खयाल था कि वही चोरों का सरगना है, चोरी करता है और इस तरह हासिल चीजों को इस सूबे से उस सूबे में बेचवाया करता है। गंगादास को पुराने पंडितों ने हितोपदेश भी दिए, फिर भी दोनों की मैत्री ठंडी न पड़ी, दिनोंदिन गरमाती ही गई। लोग आश्चर्य, आखिर कहने लगे, 'लुटेरे का मित्र यह साधु क्यों है, और हठपूर्वक रहना चाहता है? क्या गूदड़ की कमाई में गंगादास का भी भाग होता है? तो क्या साधु गंगादास इतना गिरा हुआ है, ऐसा तो नहीं। बातचीत से, रंग-ढंग से, ऐसा तो नहीं मालूम पड़ता। फिर अब तक कभी, किसी ने भी, गंगादास को किसी भी दुराचार के नजदीक नहीं पाया। एक-ब-एक साधु को हल्का सोचने में लोग मन-ही-मन सिहरते थे। मगर गूदड़ की असाधुता के प्रमाण भी कम नहीं। नवगढ़ी के डाके में कितनों ने गूदड़ को साफ पहचाना, मगर पकड़ उसे कभी कोई न पाया। पब्लिक तो पब्लिक-पुलिस तक!'

'बदमाश गूदड़ के मारे तो नाकों दम हो रहा है। हजार कोशिशें करने पर भी उसके खिलाफ एक भी सबूत या गवाह हम नहीं पाते।' लक्ष्मीपुर-कस्बा-पुलिस-स्टेशन के इंचार्ज ने झंखते हुए छोटे दारोगा से कहा।

छोटे दारोगा बाबू बंगाली थे और पुलिस में चंद बरसों से ही होने पर भी बड़े जोशीले और बुद्धिमान ऑफिसर माने जाते थे।

'गवाह नहीं मिलते, इसका सबब कुछ-कुछ मैं जानता हूँ, शायद...।'

'क्या... आप जानते हैं?' बड़े दारोगा ने दरियाफ्त किया।

'मैं समझता हूँ, महंत गंगादास का दोस्त होने की वजह से कस्बे के लोग गूदड़ के खिलाफ गवाही देने नहीं आते, क्योंकि महंत गंगादास चालचलन के बहुत ही अच्छे साधु हैं। उनका स्नेह-पात्र या मित्र लुटेरा भी हो सकता है, लक्ष्मीपुर का कोई भी ऐसा विश्वास कर नहीं सकता।'

'आप तो गंगादास की बगिया में अक्सर जाते हैं? आप ही ने कहा था न कि वहाँ के कुएँ का पानी स्वास्थ्य देने वाला और रासायनिक द्रव्यों से दिव्य है। आप पूछते क्यों नहीं गंगादास से कि उसकी किस खूबी पर खुश हो उन्होंने उसे अपना सहचर बनाया है? यह बाबा भी...।'

'नहीं जनाब,' छोटे दारोगा ने प्रार्थना भरे स्वर में कहा, 'गंगादास पर शक लाना दूध को ताड़ी समझ लेना होगा।'

'फिर...' बाईं हथेली पर दाहिना घूँसा मार बड़े दारोगा ने कहा, 'फिर गंगादास ऐसे शातिर बदमाश का साथी क्यों है? आप नहीं जानते बाबूजी,' बड़े दारोगा ने अनुभवजन्य रोष दिखाया, 'आप अभी चाल ही साल से पुलिस में हैं। ये बाबे - मैं कहता हूँ - ये बाबे सौ में सवा सौ पाजी होते हैं। बने, ढोंगी, ठग - जे ताकहिं पर-धन, पर-दारा...।'

'मेरी कुछ और ही राय है।' छोटे बाबू ने अपने अफसर की तरफ गंभीरता से देखकर कहा, मैं समझता हूँ, गंगादास को गूदड़ का जीवन पसंद आता है, मोहक मालूम पड़ता है। क्यों? 'मैं समझता हूँ, बचपन से ही कठोर व्रत, संयम, नियमों का पालन करते-करते उक्त सभी अच्छे गुणों से गंगादास का मन खट्टा-सा हो गया। मुझे तो अक्सर डर...'

'डर क्या छोटे बाबू**?**'

'मैं अक्सर गंगादास से बातें करने के बाद इस चिंता में पड़ जाता हूँ कि क्या यह शख्स जिस जगह पर है, वहाँ खुश है? क्या वैराग्य, ब्रह्मचर्य और व्रत-पूजन का जीवन इसे पसंद है? या - या...'

'या क्या**?**'

'या जिसने बचपन में गुरु के डर से गली में खेलना बंद कर बराबर माला फेरने का अभ्यास किया, जवानी में माशूकों की गली की खाक छानने की जगह "राम-रज" से मूँड़ मारा - वही जबरदस्ती - वह तन से साधु होकर भी मन-ही-मन अधूरा ही रहा। मैं जो गंगादास की जगह होता, तो कभी का बगिया और कमंडलु बेचकर एक बार संसार का दूसरा पहलू भी देखता। और, तब अपने को पूर्ण मनुष्य समझ, पूर्ण मनुष्य से साधु को बहुत कम समझता।'

'हा हा हा हा!' हँसे बड़े दारोगा साहब, 'छोटे बाबू की बातें होती हैं दूर की - पते की। जिन्हें कहते हैं अँगरेजी-जबान में - हाँ - "साइकालॉजिकल" बातें। खैर, इस गूदड़ को अब आप ही सँभालिए। मुझे पूरी उम्मीद है, बदमाश को सप्रमाण गिरफ्तार न कर सकने की कमजोरी पर ऊपर के ऑफिसर नाराज हैं, और तबादले का डर सिर पर सरासर नाच रहा है। जोकि ईमानदार आदमी को तबादले से घबराना नहीं चाहिए,

लेकिन हम तो बदले जाएँगे नालायक बनाकर...। ऐसा न होने पाए छोटे बाबू! गूदड़ का केस आप ही सँभालिए।'

'गूदड़ भाई!' गंगादास ने मंदिर के बरामदे में बैठे-बैठे पूछा, 'पुलिस बुरी तरह तुम्हारे पीछे है, यह तुम जानते हो?'

'जानता हूँ, महाराज!' मित्र होने पर भी नम्रता से गूदड़ ने कहा, 'लेकिन आपकी कृपा से कच्ची गोलियाँ गूदड़ ने नहीं खेली हैं। लूटपाट के हर एक मौके पर मैं नहीं रहता, मेरे साथी लोग रहते हैं। मैं स्वयं किसी औरत के पास या डाका डालने जब जाता हूँ, तब एक खास तरह के यंत्र से लैस होकर जाता हूँ।'

'यंत्र?' आश्चर्य से मुँह फैलाकर गंगादास ने अहीर गूदड़ से पूछा, 'क्या स्त्री-गमन और डाके लिए भी यंत्र-मंत्र होते हैं? क्या है तुम्हारे पास?'

'मेरे पास...' गूदड़ ने धीरे से जवाब दिया, 'दो टके बराबर ताँबे के सिक्के हैं, उन पर कुछ मंत्र-सा खुदा है।'

'ताज्जुब!' साधु ने फिर पूछा, 'कैसे काम में लाते हो, जरा सुनूँ।'

'स्त्री-संग के लिए खास यंत्र को कमर में बाँधा जाता है, डाकों में रक्षा के लिए मुँह में रखा जाता है। सब विश्वास की बातें हैं, इसे मुँह में रखकर पचासों बार मैं यारों के साथ "काम" पर गया, और बेदाग, हर बार, बचकर आया। यहाँ तक कि पुलिस हैरान है। अब भले ही दुनिया इन यंत्रों पर एतबार न लाए, मगर मैं तो पूरा भरोसा करता हूँ।'

'मैंने भी पुलिसवालों से तुम्हारी तारीफ सुनी है!'

'ठीक है महाराज।' जरा उदासी से गूदड़ बोला, 'सब ठीक है, मगर न जाने क्या नहीं ठीक है, जिसे दिल से महसूस करने पर भी बतलाया नहीं जा सकता... मैं, आप विश्वास मानिए, इस जीवन से ऊब उठा हूँ।'

'क्या?' हैरान गंगादान ने पूछा, 'तुम्हारा जीवन-क्रम मुझे तो बहुत ही आकर्षक मालूम पड़ता है। सुना है, कई सुंदरियाँ तुम्हारे वश में हैं।'

'हैं। बरसात का पानी नाबदान में जाता है कि नहीं, वैसे ही हमसे निरंकुश लुटेरों का सर्वस्व अबला कहलाने वाली महामायाओं के पास ही जाता है। हैं स्त्रियाँ - कई सुंदरियाँ, लेकिन मैं छक चुका उनके रूप-रस से। सबके दिल में अगर चाह है, तो महज उन रुपयों की, जिन्हें मैं अपनी जान जोखिम में डालकर भर-भर अंजुली लाता हूँ।

रुपए न होंगे, उस दिन वे सुंदरियाँ मेरी न रहेंगी। सारा दिखावा खुदगरजी का है - कठोर, नीरस। मैं इस नकली जीवन से ऊब गया हूँ। मुझे तो ऐसा लगता है कि सनक में किसी दिन सर मुँड़ाकर किसी ओर चला न जाऊँ।'

'ओह!' घबराकर साधु ने गूदड़ का मुँह बंद कर दिया, 'बुरी बातें मुँह से न निकालो। साधु होना है, तो यह मंदिर है, बगिया है। यहीं रहो और सेवा करो। कहीं भागने-जाने की क्या जरूरत? मुझे तो तुम्हारा जीवन निहायत मीठा मालूम पड़ता है। मेरा तो अगर बस चले...' गंगादास न जाने क्या कहते-कहते, न कह सके।

'बस' गूदड़ ने दृढ़ता से कहा, 'परसों आखिरी बार एक "काम" और करना है। इसलिए कि उस काम की तैयारी महीनों से हो रही है और अब पूरी हो चुकी है। लक्ष्मीपुर की विख्यात विधवा रुक्मिणीबाई के पास पाँच लाख रुपए नकद हैं। उसी के सेवकों और नौकरानियों को मिला लिया गया है। बड़ी रकम हाथ लगने की उम्मीद है। बस, सोचा है, इस काम को कर, दाम से एक दिन और मैं अंतिम बार सुख लूटूँगा। हर एक सुंदरी का तन और धन से संतुष्ट करूँगा और फिर आज्ञा होगी, तो यहीं आकर आपका चेला बन जाऊँगा। फिर ठाकुरजी की सेवा उसी प्रेम से करूँगा, जिस प्रेम से आज तक चुन-चुनकर कुकर्म करता रहा।'

'छि: गूदड़ भाई!' गंगादास ने कहा, 'कुकर्म-सुकर्म कुछ नहीं। देखते नहीं मुझे। बचपन ही से तो सुकर्म कर रहा हूँ। न जाने फिर भी शांति, संतोष क्यों हासिल नहीं। तुम अपनी समझ से "कुकर्म" करते हो। लूटपाट करने, कमर में यंत्र बाँधकर सुंदरियों से मिलने और पुरुषार्थ से सुख की सारी सामग्री पाने पर भी तुम्हें शांति नहीं, संतोष नहीं। शांति-संतोष न तो इस ओर है, और न उस ओर, फिर दोनों तरफ की सैर क्यों न की जाए?'

'महाराज!' ताज्जुब से गूदड़ बोला, 'आप ऐसे कैसे वचन बोल रहे हैं? आखिर कुकर्म कुकर्म ही है और सुकर्म सुकर्म। आपमें और मुझमें आसमान और जमीन का फर्क है।'

'कुछ भी अंतर नहीं। मैं कोई अपनी इच्छा से तो साधु हुआ नहीं, मेरा दिल चालीस साल तक आने वाले जन्म या मुक्ति के लिए खटते-खटते निस्सार और नीरस हो गया है। गुण-दोषमय संसार में जीवन का तुलन-क्रम सम रखने के लिए आदमी को अच्छे के साथ बुरे को भी देखना-जानना ही होगा, नहीं तो वह अपूर्ण, अत: बेकल जरूर रहेगा। तुम बुरा देख लेने के बाद कैसे अब भले ही तरफ बढ़ रहे हो, पूर्ण बनने की अनजान इच्छा से, वैसे ही गंगादास की पूर्णता के लिए अभी जरूरत है...'

'किसकी जरूरत?'

'कुकर्मों की गूदड़ भाई! जरा पास आओ। काने में एक बात कहूँ।' कान की बात सुनकर गूदड़ सकते में आ रहा।

'महाराज! आप क्या कहते हैं? ऐसा नहीं हो सकता। आप ऐसा कुछ कर ही नहीं सकते। जिस तरह अच्छे काम अभ्यास से होते हैं, वैसे ही बुरे कामों की भी कहानी है। इनके लिए जितने अभ्यास की जरूरत है, आपमें उसका दसवाँ हिस्सा भी नहीं। और, न कोशिश करने पर भी, बरसों, आप पाप के मर्म को समझ सकेंगे। भले-बुरे, सबके लिए अभ्यास की जरूरत है। खैर, अब आज्ञा हो। विधवा के घरवाला काम करने का इंतजाम करना है। कौन आ रहा है? हाँ, पहचाना आपने?'

'छोटे दारोगा - बंगाली बाबू - मेरे मित्र हैं...।'

'मैं जाऊँ?'

'यह शक करें, तो - कि मेरे आते ही भागा गूदड़?'

'करें शक बेशक! यह हमारा कुछ भी नहीं कर सकते। जैसे इन्हें अपने पुलिस होने का घमंड है, वैसे ही हमें भी पुलिस की आँखों में धूल झोंकने वाला होने का अभिमान है। आइए, सलाम छोटे बाबू!'

'ओह गूदड़!' तेज नजर उस पर डालकर बंगाली दारोगा ने पूछा, 'खैरियत तो है?'

'आपकी दया है।' गूदड़ ने 'खग ही की भाषा' में जवाब दिया। 'आप बाबाजी से सुलझिए। मुझे कुछ काम है।'

गूदड़ चला, फिर भी बंगाली छोटे दारोगा ने बाधा देते हुए एक प्रश्न और किया, 'क्या काम है गूदड़ भाई? कस्बे में काम है या बाहर? तुम खुद जा रहे हो?'

'हाँ, घर पर कुछ काम है। काठियावाड़ की भैंसें बिकने आई हैं, उन्हीं के सौदागरों से झक-झक करना है। माफ करिएगा।'

गूदड़ चला गया। निर्भय, निर्बाध। कुछ और पूछने की इच्छा होने पर भी छोटे दारोगा पूछ न सके। परिणाम यह हुआ कि साधु गंगादास से आज उन्होंने बहुत सीधा, साथ ही टेढ़ा सवाल किया, 'इस डाकू से आपकी इतनी दोस्ती क्यों?'

'डाकू? किसने कहा?' गंगादास ने पूछा, 'गूदड़ डाकू नहीं, साधारण पेशेवर इंसान है। उसे आपने क्या कुसूर करते पाया?'

'यही तो हैरानी है!' सब-इंस्पेक्टर ने कहा, 'मौके पर गूदड़ कभी पकड़ा न गया। वैसे उसके खिलाफ आतिशबाजी, डाके, जुए और जिना की गाड़ियों शिकायतें थाने की दराजों में इकट्ठी हैं। फिर भी हम उसे पकड़ नहीं सकते। हमारा ऐसा खयाल है, आपकी वजह से गूदड़ मजबूत है। आपका दोस्त जान आपके भक्त-मुलाहजा कर जाते हैं। इसी गूदड़ के बारे में खास तौर पर आज मैं आया हूँ। इसे जल्द ही इस कानून के शिकंजे में कसेंगे, लेकिन यह काम आपकी मदद बगैर मुमकिन नहीं।'

'कैसी मदद आप मुझसे चाहते हैं**?**' गंगादास ने पूछा।

'उसे गिरफ्तार कराने में।'

'वह तो मेरा मित्र है।'

'वह चोर है**!** गूदड़**!**'

'किसी-न-किसी अर्थ में हम सभी चोर हैं।' गंगादास ने दबंग आवाज में जवाब दिया, 'न पकड़े जाने के कारण हमें कोई चोर नहीं कहता। इसी तरह जब तक गूदड़ पकड़ा नहीं जाता, उसे चोर कहना ठीक नहीं। आप तो कानून जानते हैं।'

'ठीक है। अफसोस, आप बिल्कुल ठीक कह रहे हैं। मगर यह अफसोस टिकाऊ नहीं। हम लोग हैं पीछे गूदड़सिंह के। जरूर कपड़ेंगे रँगे हाथों एक-न-एक दिन - और वह दिन बहुत दूर नहीं।'

'गूदड़ मेरा मित्र है। जब कभी उसके रँगे हाथ आपके चंगुल में आवेंगे, आप देखेंगे, वे हाथ गंगादास के होंगे, गूदड़ के नहीं। वह तो साधु है साधु।'

'और आप**?**'

'मैं साधुता की खाँड़ खाते-पीते खीझकर अब जरा जायका बदलने के लिए दुनिया के दूसरे तेज रंग देखने को लालायित हूँ। मैं गूदड़ भाई को बुरा आदमी नहीं मानता, और न अपने को बहुत भला।'

रात अँधेरी और घनघोर - बरसाती वक्त कोई बारह बजे का। पानी बरसते-बरसते रुक गया था, सन्नाटा चारों ओर भयानक थी। इसी वक्त लक्ष्मीपुर-कस्बे का कोई व्यक्ति

गोपालदास की बगिया की ओर जाता नजर आया। आदमी सिर से पैर तक काले लाबादे से ढका था। उसके हाथ में एक लंबा डंडा भी बिजली की चमक में साफ दिखाई पड़ता था।

वह जब बगिया के निकट पहुँच गया, नजर दौड़ाकर उसने चारों ओर सर्तकता से देखा, कोई पीछे है तो नहीं। जब कोई नजर न आया, तब वह बगिया के अंदर दाखिल हुआ।

और, अब बगिया के फाटक पर दो काली मूर्तियाँ पुन: नजर आईं। वे दोनों आदमी पहले के साथ नहीं आए थे, बल्कि कहीं छिपे थे - अर्से से। वे धीरे-धीरे बातें करने लगे, 'गूदड़ ही तो है। जा रहा है गंगादास को प्रणाम कर आशीर्वाद लेने।'

'गंगादास तो गंगादास, आज विष्णुदास भी गूदड़ को हमसे बचा न सकेंगे। मैं यहाँ अकेला ही काफी हूँ। तुम जाओ। सारी तैयारी सही-सही जगहों पर फौरन करो। मैं गूदड़ के साथ आऊँगा।'

एक आदमी कस्बे की तरफ लौटा। दूसरा बगिया के फाटक पर खड़ा-खड़ा अंदर की बातें सुनने की चेष्टा करने लगा। मगर गूदड़ और गंगादास फाटक से काफी दूरी पर बातें कर रहे थे, कुछ-कुछ उत्तेजित, जो सुनाई पड़ता था अस्पष्ट। एक बार आवाज आई गूदड़ की, 'बस, यह मेरा आखिरी काम ठीक, फिर मैं बैरागी बन जाऊँगा।' दूसरी बार आवाज आई गंगादास की, 'फिर नहीं, आज ही बैरागी बन जाओ। यह काम अब उसे सौंपो, जो वैराग्य से ऊबकर अनुराग की तरफ लुब्ध हो।' वे फिर धीरे-धीरे बातें करने लगे, जिन्हें बाहर का भेदिया कुछ भी सुन न सका। मगर गंगादास की आवाज पुन: बुलंद हुई, 'बस, मंदिर, बगिया और ठाकुरजी की सेवा तुम सँभालो। तुम्हारी सारी सुंदरियों को मैं सँभाल लूँगा। मैं ऊब गया हूँ वैराग्य से। अनुराग का अर्थ समझने के पहले ही मुझे बैरागी बना दिया गया, सो ठीक नहीं हुआ। एक बार चिमटकर दुनिया सुंदरी का प्रेमरस मैं चखना चाहता हूँ। वैराग्य बहुत हो चुका।'

इसके बाद कोई आध घंटे तक वे दोनों आपस में उलझते रहे, लेकिन बोलते थे धीरे। आखिर वे फाटक की ओर आते मालूम पड़े। पद-ध्वनि सुन गुप्त पुरुष पुन: आड़ में हो रहा। फाटक पर आ उनमें से एक ने दूसरे से कुछ कहा या पूछा, पता न चल सका। हाँ, इतनी आवाज सुनाई पड़ी - 'क्या?' ... 'यंत्र के दोनों सिक्के - यह कामिनी-मर्दक और यह शत्रुनाशक यंत्र!' इसके बाद दोनों में से एक बगिया का फाटक बंद कर अंदर की ओर और दूसरा कस्बे की तरफ बढ़ा। तेजी से, काले लबादे में, लंबा डंडा साथ हाथ में। वह व्यक्ति बेखटके बढ़ा चला जा रहा था, जोकि उसके जरा ही पीछे एक तगड़ा 'खटका' लगा हुआ था।

कस्बा-लक्ष्मीपुर के पूर्व में गोपालास की बगिया थी। वह आदमी दक्षिण की ओर चला। पीछा करनेवाले ने भी उसे अपनी आँखों से कभी ओझल न होने दिया। एक पुराने, सूखे नाले के पास आकर डंडाधारी ने ताली बजाई। जिससे पचासों आदमी चारों तरफ से निकल आए। पहले आदमी ने आज्ञा के स्वर में सबसे कहा, 'फौरन अपने-अपने काम पर पंद्रह-पंद्रह की तीन टुकड़ियों में बँटकर विधवा के घर पर झपटो। हमें पता मिला है, उसके पास कई लाख नकद है। बस, हिम्मत और जीवट की जरूरत है। वर्षों का खर्चा एक ही घर में भरा धरा है - बहादुरों! बढ़ो, लूटो!' और, बिना एक शब्द के आज्ञा का पालन हुआ। तीन टुकड़ियों में बँटकर सब-के-सब कस्बे में घुस गए।

थोड़ी ही देर बाद रुक्मिणीबाई के मकान पर भयानक डाका पड़ा। डाकुओं के पास मशालें, टार्च, तलवारें और बंदूकें भी थीं। डाकुओं को जैसे घर का एक-एक कोना मालूम था। देखते-ही-देखते रुक्मिणीबाई के सारे नौकरों को बाँध, औरत-बच्चों को एक कोठरी में बंदकर रुक्मिणीबाई को डरा-धमका, चाबियों का गुच्छा छीन, तिजोरियाँ खोल और तोड़-तोड़कर बरसों का संचित माल डाकू लूटने लगे। इसमें उन्हें बहुत वक्त न लगा। आनन-फानन में विधवा का सर्वस्व लूटकर भाग खड़े हुए।

मगर अधिक दूर न गए होंगे कि सामने से पुलिस की तेज टार्चों का प्रकाश उनकी भयानक शक्लों पर पड़ा। वे घबराकर पीछे की तरफ, भागने के इरादे से, मुड़े। मगर इधर भी पुलिस के टार्चों का अग्निमय जमघट! देखते-ही-देखते पूरा गिरोह घेर लिया गया। पुलिस के जवान कोई डेढ़ सौ थे। एक-एक डाकू के हिस्से में तीन-तीन! काले लबादेवाले डंडाधारी को पुलिस के कई ऑफिसरों ने जा घेरा- 'कहाँ भागता है बदमाश गूदड़, ठहर!'

'एक कदम भी आगे बढ़ा कि गोली मार दूँगा। पहचानता नहीं, मैं बंगाली सब-इंस्पेक्टर हूँ। तुझ जैसे डाकुओं का काल।'

'ओ: आप हैं! बंगाली बाबू?' लबादेवाले नकाबपोश ने कहा, 'गूदड़ के हाथ में जब तक यह यंत्र है, उसे कोई पकड़ न सकेगा। देखिए।'

उधर बंगाली सब-इंस्पेक्टर के हाथ में यंत्रित सिक्का गया, इधर पुलिस के हाथों नकाबपोश गिरफ्तार!

'फाड़ डालो इसका लबादा।' एक ऑफिसर ने आज्ञा दी - 'कई बरस से यह गूदड़ साला हाथ आ नहीं रहा था। इसे आज नंगाकर यहीं से जूते लगाते कोतवाली ले चलो।'

हुक्म की देर - पुलिस के एक जवान ने इधर से लबादे को लिया, दूसरे ने उधर से। तीसरा नकाब पर झपटा। तब सबसे पहले बंगाली सब-इंस्पेक्टर ने और फिर सबने देखा कि नकाब के अंदर की सूरत गूदड़ ग्वाले की नहीं, किसी और ही की है!

'आप...?' परमाश्चर्य से बंगाली सब-इंस्पेक्टर ने पूछा।

'हाँ, बंगाली बाबू, मैं ही हूँ - गंगादास। गूदड़ ग्वाला तो कभी का साधु हो गया है।'

'साधु!' हैरत से बंगाली दारोगा बोला - 'विश्वास नहीं होता गंगादासजी!'

'बंगाली बाबू, मुझसे उसी भाषा में बातें करने की कृपा कीजिए, जिसमें गूदड़ ग्वाले से करते। मुझे साधु अब न समझिए। अब तो मैं साधुत्व की मिठाई से ऊबकर दुनिया की खटाई का मजा लेने पर आमादा हूँ। देवता बदल गया बाबूजी! पूजा का प्रकार भी, साथ ही, बदलना चाहिए।'